Chapter- 1.

अध्याय 1

हिन्दी भाषा का उद्भव एवम् विकास

राजकाज की भाषा के रूप में हिन्दी का विकास

Chapter-1

अध्याय 1

हिन्दी भाषा का उद्‌भव एवं विकास

हिन्दी भारत की एक प्राचीन और महत्वपूर्ण भाषा है परन्तु इसकी उत्पत्ति के बारे में विभिन्न विचारधाराएं हिन्दी जगत में देखने को मिलती हैं। हिन्दी का इतिहास वास्तव में वैदिक काल से आरम्भ होता है। उससे पहले इस आर्यभाषा का क्या स्वरुप था। यह आज कल्पना का विषय बन गया है। इसका कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अतः वैदिक भाषा ही प्राचीनतम हिन्दी है। इस भाषा के इतिहास का यह दुर्भाग्य है कि युग-युग में इसका नाम परिवर्तित होता रहा है, कभी वैदिक, कभी संस्कृत, कभी प्राकृत, कभी अपभ्रंश और अब हिन्दी/सदियों तक हिन्दी के लिए कई नामों का प्रयोग होता रहा, जैसे हिन्दवी, हिन्दी, हिन्दुस्तानी, जबाने-उर्दू-ए-मुअल्ला, जबाने हिन्दुस्तान, देहलवी इत्यादि। किन्तु यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि हिन्दी शब्द फारसी की ही देन है। कहा जाता है कि संस्कृत की 'स' ध्वनि फारसी में 'ह' हो जाती है। इसलिए फारसी भाषा-भाषियों का सम्पर्क भारत के सिंध प्रदेश से हुआ तो सिन्ध को हिन्द, सिन्धु को हिन्दू और सिन्धी को हिन्दी कहा गया। नागरी और फारसी दोनों लिपियों का प्रयोग करने वाली भाषा को महात्मागांधी ने 'हिन्दुस्तानी' कहा। जहाँ तक हिन्दी भाषा के विकास का सवाल है, कुछ इतिहासकारों

के अनुसार प्राकृत भाषा से अपभ्रंश और हिन्दी का विकास हुआ। लेकिन अन्य जानकारों के अनुसार सिर्फ अपभ्रंश से ही हिन्दी का तथा उत्तरी भारत की अन्य आधुनिक भाषाओं का विकास हुआ है। श्री शिवसिंह सेंगर के अनुसार हिन्दी का उद्‌भव काल छठी सदी के आसपास हुआ जबकि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार सातवीं शताब्दी के प्रारम्भ से। डॉ. रामकुमार वर्मा दसवीं शती के आसपास हिन्दी का आविर्भाव कालं मानते हैं। लेकिन आठवीं शती में यदि सिद्धों की वाणी में हिन्दी के अस्तित्व को स्वीकार कर लिया जाए तो यह मानना पड़ेगा कि हिन्दी की उत्पत्ति 769 ई. के आसपास हुई होगी। यह कहना काफी सही होगा कि हिन्दी भारत के विभिन्न भाषा-भाषी साधुओं, संतों, भक्तों, दरवेशों, फकीरों, व्यापारियों, तीर्थ यत्रियों, सैलानियों के परस्पर मेलजोल से, सम्पर्क से, विनिमय से जन्मी और विकसित हुई। इसी भाषा को सधुक्कड़ी भी कहा गया था तो कुछ ने इसे खिचड़ी कहा। यह भी कहा गया कि यह मुहब्बत की भाषा है चाहे कोई इसे उर्दू कह ले या हिन्दी या हिन्दुस्तानी। (हफ़ीज अपनी बोली, मुहब्बत की बोली, न हिन्दी न उर्दू न हिन्दोस्तानी - हफ़ीज जालन्धरी)

लगभग 900 वर्ष पूर्व अमीर खुसरो ने फारसी का विद्वान होते हुए भी इस भाषा में कविता की शुरुआत की।

खीर पकाई जतन से, चरखा दिया चला,
आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजा।

इसी प्रकार से -

एक थाल मोती से भरा, सबके सिर पर औंधा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे, मोती उससे एक न गिरे॥

उन्हीं की एक और पंक्ति है, 'एक नार ने अचरज किया, सांप मार पिंजरे में दिया।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'खड़ी बोली का कितना निखरा हुआ रूप है', कहकर अमीर खुसरो की इस भाषा की प्रशंसा की। खुसरो की ये पहेलियाँ और मुकरियाँ करीब 900 वर्ष पुरानी हैं। कबीर की भाषा में भी इसके कई रूप मिलते हैं। उर्दू कवि मीर ने अपनी कविता की भाषा को हिन्दी कहा था : 'आया नहीं है लफ़्ज ये हिन्दी जबां के बीच।' मीर के बाद उर्दू के दूसरे महान कवि इकबाल ने भी हिन्दी शब्द का प्रयोग कितनी आत्मीयता के साथ किया है : 'हिन्दी है हम वतन हैं हिन्दुस्तां हमारा'। मीर के इस पंक्ति को पढ़कर तो ऐसा लगता है मानो यह आज ही की समकालीन हिन्दी हो : 'इक जरा सी बात का विस्तार हो गया'। गालिब ने मीर से इसी भाषा को विरासत में लिया। यह बात और है कि उन्होंने उसे अरबी और फारसी शब्दों से भारी भरकम अथवा बोझिल बनाने की कोशिश की। उर्दू के एक और बड़े कवि दाग ने लिखा है - 'नहीं खेल है दाग यारों से कह दो, के आती है उर्दू जबां आते-आते।' यहाँ उर्दू जबां से उनका तात्पर्य फारसी, अरबी अथवा संस्कृत से लदी फदी भाषा से नहीं है। उनका आशय उसी सहज भाषा से है जिसे मीर 'हिन्दी' और गालिब 'हिन्दवी' कहा करते थे। दक्खन में वली दक्खनी ने इसी भाषा में शायरी की। कहने का तात्पर्य यह है कि उस काल में हिन्दी और उर्दू के बीच भाषा-भेद नहीं था मात्र लिपि-भेद था। आगे चलकर संस्कृत शब्दावली की भरमार से एक ही भाषा के दो रूप हो गए। धार्मिक कट्टरता ने इस भेदीकरण की प्रक्रिया को और तीव्र किया। आज हिन्दी और उर्दू दो अलग-अलग भाषाएं हैं। किन्तु यह तथ्य है कि रेख्ता कहो या खडी बोली, उर्दू कहो या हिन्दी, वह वही भाषा थी जिसे गांधीजी हिन्दुस्तानी कहना पसन्द करते थे। भारत के संविधान के अनुच्छेद 351 में राजभाषा के जिस स्वरूप की परिकल्पना की गई है वह गांधीजी की हिन्दुस्तानी के बेहद निकट है और भाषा के इस स्वरूप का अपना इतिहास है जो लगभग 900 वर्ष पुराना है।

अंग्रेजों के भारत में आने से पूर्व यही हिन्दी या हिन्दुस्तानी भारत की सम्पर्क भाषा थी। अंग्रेजों के आने के बाद भी यह सम्पर्क भाषा बनी रही। सिर्फ मुट्ठीभर

अंग्रेजीदां लोगों ने इस ऐतिहासिक सत्य को झुठलाने की कोशिश की। उन्होंने हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी को भारत की सम्पर्क भाषा के रूप में मान्यता दी और उसे भारतीय जनता पर थोपा। परन्तु हिन्दी को किसी ने नहीं थोपा। वह तो स्वतः स्वाभाविक रूप से गत 1000 से भी अधिकवर्षों से भारत के साधुओं, संतों, सूफियों, दरवेशों, फकीरों व्यापारियों और तीर्थाटकों के बीच आपसी विनिमय और आदान प्रदान की भाषा रही है। गुरुनानक देश से बाहर गए और मक्का तक हो आए इसी भाषा के सहारे। इसी उर्दू-हिन्दी मिश्रित हिन्दुस्तानी का प्रयोग करते हुए उन्होंने देश-विदेश में अपने संदेश का प्रचार और प्रसार किया : 'राम की चिड़िया, राम का खेत, खाओ चिड़ियो भर-भर पेट। ऋषि दयानन्द गुजराती थे। लेकिन आचार्य केशवचंद्रसेन ने, जो बंगलाभाषी थे, उन्हें परामर्श दिया कि वे हिन्दी सीखें और हिन्दी में भाषण दें तो अधिकांश जनता उनके विचारों से लाभान्वित होगी। उल्लेखनीय है कि ऋषि दयानन्द प्रारम्भ में संस्कृत में भाषण देकर अपना संदेश सम्प्रेषित करते थे। तदुपरांत उन्होंने हिन्दी सीखी, हिन्दी में भाषण देना शुरू किया, फिर अपनी किताबें भी हिन्दी में लिखी। उनकी महत्वपूर्ण पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' अपने समय के हिन्दी गद्य का एक अच्छा खासा उदाहरण है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने आजाद हिन्द फौज के कमाण्ड हिन्दी में देने की सर्वप्रथम शुरुआत की। कहते हैं उन्होंने ही रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा रचित राष्ट्रीय गान का हिन्दी में पद्यानुवाद किया था। शहीद भगतसिंह पंजाबी थे लेकिन हिन्दी बोलते थे। मुगल काल में शहजादे दारा ने भी हिन्दी या हिन्दुस्तानी में ही कविता की। यह विचारणीय है कि आखिर अमीर खुसरो, रहीम, दारा, गुरुनानक, गुरु गोविंद सिंह, ऋषि दयानन्द, सुभाषचन्द्र बोस और महात्मा गांधी जैसे महापुरुषों पर हिन्दी कौन थोप सकता था। इस सभी ने स्वेच्छा से हिन्दी को अपनाया। स्वयं अंग्रजों ने कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की तो हिन्दी गद्य लिखवाने के लिए मुंशी सदासुखलाल, सैयद इंशा अल्लाखां, लल्लूलाल और सदल मिश्र को खड़ी बोली में गद्य की पुस्तकें तैयार करने का कार्यभार सौंपा। आखिर क्यों ? वह

इसलिए कि अंग्रेजी के प्रचलन से पूर्व हिन्दी ही भारतीय जनता के बीच सम्पर्क-भाषा की भूमिका अदा करती रही थी। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम - सारे देश के दार्शनिकों, विद्वानों, सन्तों और साहित्य-मनीषियों ने इसे बनाया संवारा और अपने प्रयोग में लाकर इसे गौरवांवित किया।

राजकाज की भाषा के रूप में हिन्दी का विकास

हिन्दी के प्रारंभिक स्वरूप का विकास उत्तर अपभ्रंशकालीन युग से ग्यारहवीं शताब्दी से हुआ। दानपत्र तथा शिलालेख सन् 1172 ई. के मिलते हैं। पृथ्वीराज के सिंहासन पर आरूढ़ होने का उल्लेख 1178 ई. का मिलता है। प्राचीनकाल के सिक्कों से पता चलता है मुहम्मद गोरी के सिक्कों में देवनागरी का प्रयोग होता था। शहाबुद्दीन ने सन् 1192 ई. में ब्रजमिश्रित भाषा का प्रयोग किया। इस भाषा का और विकास तब हुआ जब अलाउद्दीन तथा तुगलक के कारण उत्तर भारत के लोग तेरहवीं शताब्दी में बड़ी संख्या में दक्षिण में गये। अकबर ने मालवा, बरार,खानदेश और गुजरात को मिलाकर 'दक्खिन'प्रदेश बनाया। उस समय कुछ मुस्लिम परिवारों को छोंड़कर शेष सभी व्यापारी और श्रमिक घर-बाहर सभी जगह खड़ी बोली का प्रयोग करते थे। डॉ. श्रीराम शर्मा के अनुसार 'इन सेनाओं के नायकों में ऐसे लोगों की संख्या अधिक थी जो दिल्ली में बस गये थे या दिल्ली में जनमें थे। वे लोग खड़ी बोली से अच्छी तरह परिचित थे। खड़ी बोली पर हरियाना, मेवात, शेखावाटी तथा ब्रज से सम्बन्धित बोलियों का प्रभाव था। उत्तर भारत के विभिन्न प्रान्तों से आये हुए ये परिवार घरेलू जीवन में अपनी बोली बोलते थे और दूसरे क्षेत्र के व्यक्ति से मिलते समय खड़ी बोली का प्रयोग करते थे। ईरान, इराक के मुसलमान आफाकी कहलाते थे। वह कभी मराठी-भाषी क्षेत्र में, तो कभी तेलुगू-भाषी प्रदेश में और कभी कर्नाटक प्रदेश में नियुक्त होता था। यही कारण है कि आफाकी लोगों नें भी खड़ी बोली को सामान्य बोलचाल के लिए स्वीकार कर लिया। हैदरअली और टीपू सुल्तान इसको सुदूर केरल तक ले गये जहाँ यह भाषा 'गोसायि' भाषा के रूप में जानी गई। उत्तरी भारत

से आने वाले संत लोगों के अर्थ में विशेष रूप से तीर्थ यात्री के अर्थ में 'गोसायि' (गोसांई) का सामान्य प्रयोग बढ़ा। हैदर और टीपू ने कोचीन के राजा के साथ जो संधि की, उसके अनुसार राज्य परिवार के लोगों को हिन्दुस्तानी सिखाने के लिए कहा गया। जिसके फलस्वरूप हिन्दुस्तानी मुंशी की नियुक्ति हुई और हिन्दुस्तानी को प्रशासन में स्थान मिला।

जिस समय संस्कृत का व्यापक प्रयोग हो रहा था मध्य प्रदेश की संस्कृत ही मानक और अनुकरणीय मानी जाती थी। पूरे देश के संस्कृत प्रयोक्ता औपचारिक अवसरों पर संस्कृत के मध्यदेशीय रूप का ही प्रयोग किया करते थे। यह मध्यदेश सामान्यत: वही क्षेत्र है जो आज केन्द्रीय हिन्दी प्रदेश है। उस प्राचीन काल से लेकर लगभग 12वीं सदी तक भारत के मुख्य राज्यों में संस्कृत का यही रूप राज्यभाषा था। यों बीच-2 में कुछ और भाषा रूपों के भी व्यापक प्रयोग हुए। उदाहरण के लिए पाली काल(500 ई.पू.से 1 ई. तक) में पाली का व्यापक प्रयोग हुआ, किन्तु यह बात उल्लेखनीय है कि पाली भी मूलत: मध्यदेशीय भाषा ही थी और आधुनिक हिन्दी का ही प्राचीन रूप थी। उस पर मगध का प्रभाव अवश्य था लेकिन वह भी हिन्दी प्रदेश ही है। सम्राट अशोक ने यों तो बौद्धधर्म स्वीकार कर लिया था और उसके राज्य में पाली का आदर भी था किन्तु उसके राजकाज की भाषा प्राचीन शौरसेनी थी जो मध्य देशीय भाषा ही थी, ब्रज-खड़ी बोली आदि का प्राचीन रूप। प्राकृतकाल (1 ई. से 500 ई.) में इसी शौरसेनी का सर्वाधिक प्रयोग होता था। संस्कृत नाटकों में भी इसलिए उच्चस्तरी पुरूषों को छोड़कर अन्य पात्र शौरसेनी का ही प्रयोग करते मिलते हैं। कलिंग के जैन राजाओं तथा आंध्रवंशी राजाओं के यहाँ शौरसेनी ही राजभाषा थी। आगे चलकर इसी परंपरा में पश्चिम की साहित्यिक अपभ्रंश(शौरसेनी अपभ्रंश) का प्रयोग सातवाहन,प्रवरसेन,यशोवर्भन आदि बाद के राजाओं ने अपने यहाँ राजभाषा के रूप में किया।इस तरह मध्यदेशीय भाषा के प्रयोग की परंपरा आगे बढ़ी।

12वीं शदी के बाद तुर्कों और अफगानों के आगमन से राजभाषा फारसी बनी

किन्तु आंशिक रूप से तत्कालीन केन्द्रीय भाषा पुरानी हिन्दी को भी सहभाषा के रूप में स्वीकृति मिली थी क्योंकि अधिकांश सरकारी कर्मचारी भारतीय थे और उन सभी के लिए फारसी का प्रयोग बहुत सरल नहीं था। हिसाब-किताब का तो काफी काम हिन्दी में चलता था। आगे चलकर अलाउद्दीन खिलजी की दक्षिणी विजयों के परिणाम स्वरूप हिन्दी दक्षिण भारत में पहुँचीऔर उसे अरबी-फारसी शब्दों के साथ आदिलशाही, कुतुबशाही, बरीदशाही, हमामशाही, निजामशाही राज्यों में संरक्षण मिला। यही भाषा आज 'दक्खिनी' के रूप में जानी जाती है।

दक्खिनी हिन्दी का जन्म सन् 1307 के बाद दक्षिणी राज्यों में हुआ। उस समय आन्ध्रप्रदेश और कर्नाटक पर अलाउद्दीन खिलजी का शासन हो चुका था और ये प्रदेश दिल्ली के सूबों के रूप में जाने जाते थे। कहा जाता है कि14वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दिल्ली के सुल्तानों ने हरियाणा और कुरू प्रदेश के लोगों को दक्षिण में दौलताबाद और उसके आसपास जा बसाया था। अलाउद्दीन के बाद दक्षिण में पांच स्वतंत्र राज्य्र स्थापित हुए गोलकुंण्डा गुलबर्गा,बीजापुर,बीदर, और बरार। इन्हीं राज्यों में दक्खिनी हिन्दी विकसित होता रही। मूलत: दक्खिनी हिन्दी का आधार 14वीं और 15वीं शती की 'खड़ी बोली' ही है जिसे मुसलमानो ने भारत आने पर अपनाया था। मसऊद, इब्रसाद, अमीर खुसरो तथा फरीदुद्दीन शकरगंज़ी आदि ने यह भाषा फौज, फकीरों व दरवेशों के साथ दक्षिणी भारत में जा पहुंचाई। वहाँ उत्तर भारत के हिन्दुओं में तथा मुसलमानों में यह प्रचलित होती चली गई। दक्खिनी को 'प्राचीन खड़ी बोली' माना गया है कारण कि इसमें मेवाती, ब्रज, पंजाबी, हरियाणवी, अवधी के रूप शामिल हैं। दक्षिण में जाने के बाद इस पर गुजराती तथा मराठी का भी कुछ-कुछ प्रभाव पड़ा। आज भी उस क्षेत्र के लोग 'दक्खिनी उर्दू' बोलते पाए जाते हैं परन्तु उस भाषा का मूल रूप उर्दू के अत्यधिक प्रभाव से पुराने रूपों के विकास से तथा तमिल, कन्नड़ एवम् तेलगू आदि क्षेत्रीय भाषाओं के प्रभाव से काफी बदल चुका है. दक्खिनी की लिपि अवश्य फारसी (प्रचलित उर्दू) है अन्यथा इसकी भाषा में सामान्य

हिन्दी की तरह भारतीय परंपरा के ही शब्द मिलते हैं। वास्तव में दक्खिनी हिन्दी की ही एक सशक्त शैली है। दक्खिनी हिन्दी का अस्तित्व लगभग 400 वर्ष तक बना रहा। आजकल लोग इसे 'कदीम उर्दू' भी कहते हैं। इस सम्बन्ध में भी सीताराम शास्त्री ने अपने खोजपूर्ण निबन्ध में लिखा है कि आज से छः सौ वर्ष पूर्व दक्खिनी भाषा (हिन्दी) दक्षिण भारत की जनसाधारण की भाषा थी और तीन सौ वर्ष पर्यन्त राजभाषा के पद पर आसीन होकर न केवल राज्य के कार्यकलापों में वरन् सामान्य जनता के वैचारिक आदान-प्रदान और भावात्मक एकता की प्रतीक बनी रही। दक्खिनी 14वीं शती के बहमनी वंश के शासन में आम जनता सी भाषा बन गई थी और राजभाषा पद भी प्राप्त कर चुकी थी। बहमती वंश के हसन गंगू के माल विभाग के महामन्त्री मंगू ब्राह्मण ने दक्खिनी भाषा को राजभाषा बनाया। दक्खिनी को राजभाषा बनाए जाने के विभिन्न कारण पर इतिहासकारों ने लिखा है : 'तेलगू, कन्नड़, मराठी आदि भाषाओं के विभागों में राज्य बंटा होने के कारण इनमें से किसी को राजभाषा का पद नहीं दिया जा सकता था। दक्खिनी भाषा सर्वत्र बोली और समझी जाती थी। वह एक प्रकार की आन्तर भाषा थी। इसीलिए शासन उसे राजभाषा का पद देने पर विवश था।'

तात्पर्य यह कि दक्खिनी भाषा (हिन्दवी, हिन्दी) को राजभाषा बनाने का उत्तरदायित्व और श्रेय दक्षिण भारत को सर्वप्रथम उपलब्ध हुआ था।

15वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बहमनी वंश के कमजोर पड़ने पर राज्य विच्छिन्न हुआ। फलतः बरार, अहमदनगर, बीजापुर, गोलकुण्डा, बीदर आदि भिन्न-भिन्न राज्य अस्तित्व में आए। बाद में बीजापुर के शासकों ने भी दक्खिनी को राजभाषा बनाया। इस प्रकार 16वीं शती के प्रारम्भ तक दक्खिनी दक्षिण के राजा और प्रजा की सामान्य भाषा बन गई थी।[1] उस समय के संबंध में सर जार्ज ग्रियर्सन ने 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया' में लिखा हैं : 'मध्य भारत के नर्मदा नदी के नीचे मध्य प्रदेश के नागपुर, वर्धा, चांदा जिले, बरार स्टेट, पुराना मद्रास, हैदराबाद, मैसूर, कुर्ग दक्खिनी

1. पुस्तक परिचय जनवरी 1975 अंक 'हिन्दी दक्षिण की राजभाषा थी': सीताराम शास्त्री पृ. 26-2

प्रदेश थे। दक्खिनी बोलने वाले बड़े-बड़े शहरों और देहातों में फैले हुए हैं।'

मुगल शासन में भी हिन्दी सहराजभाषा के रूप में थी। भारत में मुसलमानों के पश्चात् देश के उन भागों में जहाँ उन्होंने शासन स्थापित किए अरबी-फारसी को भारतीय भाषाओं के साथ प्रशासन में स्थान अवश्य मिल गया किन्तु उत्तर भारत में गुलाम वंश, खिलजी वंश, लोदी वंश, सूरी तथा मुगल वंशों के विभिन्न बादशाहों के शासन में हिन्दी के प्रयोग के प्रमाण और साक्ष्य मिलते हैं।[1] अकबर स्वयं हिन्दी में लिखते थे। उनके दरबार में रहीम खानखाना हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे। जहाँगीर को भी हिन्दी का अच्छा ज्ञान था। मुगलों की दरबारी अर्थात् राजकाज की भाषा ऊपरी तौर पर फारसी भले ही रही हो, पर बोलचाल की भाषा न होने के कारण उस समय भी काश्मीर, पंजाब, उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्य भारत आदि में हिन्दी भाषा ही आन्तर भाषा के रूप में विकसित हुई। देखा जो तो जिला स्तर पर जो आज प्रशासनिक भाषा का ढांचा है उसकी बहुत कुछ देन मुगलकाल की है - तहरीर, याददाश्त, खातेनक्शा, मिसिल, इत्तलानामा, रसीद, सनदी फरमान, हकीकत, फरद, दस्तूर, रोजनामा आदि। औरंगजेब के काल तक तो हिन्दी की विविध शैलियां प्रयोग में आने लगी थीं, साथ ही ब्रजभाषा व राजस्थानी का भी प्रशासन में प्रयोग होने लगा। डॉ. रामबाबू शर्मा के अनुसार पत्र का ढांचा जिन शीर्षकों में तैयार होता था वे थे (1) मंगलवाचक शब्द, (2) पूर्व पत्र का संदर्भ, (3) अन्य प्रासंगिक अप्रासंगिक घटनाएं, आदेश, (4) मूल विषय का वर्णन, (5) सम्राट की आज्ञाओं को कार्यान्वित करने का मुजरा, (6) पत्र प्रेषण का मास, तिथि, संवत् आदि (7) प्राप्तकर्ता के कार्यालय द्वारा सम्मानार्थ प्रेषक दीवान तथा वकील का उल्लेख, (8) प्रेषण तथा प्राप्ति तिथि का उल्लेख। हिन्दी के सहभाषा होने की बात का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि शेरशाह सूरी से लेकर बाद तक के सिक्कों पर प्रायः फारसी के साथ हिन्दी का प्रयोग मिलता है। शेरशाह सूरी ने अपने रुपये के चित्तभाग पर कलमा और टकसाल का नाम अंकित कराया था। पट्ट

1. हिन्दी भाषा का राजकाज में प्रयोग : द्वारा रामबाबू शर्मा, शोध प्रबन्ध, आगरा वि.वि.

भाग पर बादशाह का नाम ऊपरी फारसी लिपि में लिखा है और नीचे देवनागरी लिपि में 'श्री शीरशाह' (श्रीनाथ सम्वत्) लिखा है। शेरशाह के अन्य सिक्कों पर 'स्वस्तिक' का चिन्ह अंकित है तथा 'ओम' शब्द भी अंकित है। ये सिक्के दिल्ली संग्रहालय और भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग में सुरक्षित हैं।

जब भारत पर मुगलों का शासन स्थापित हुआ तो उनके सामने इस प्रकार के बहुत से प्रश्न थे, जिनका समाधान खोजने में और अपने प्रशासन को सफल बनाने में काफी सूझबूझ, उदारता, कल्पना और समन्वय नीति की आवश्यकता थी। ऐसी स्थिति में उन्होंने हिन्दू जनता, हिन्दू राजाओं, हिन्दू धर्म तथा हिन्दी भाषा के प्रति उदारता की नीति बरतना ही उचित समझा। राजभाषा के स्वरूप में हिन्दी का प्रयोग अकबर ने ही प्रारम्भ किया और इस परंपरा को बाद के सभी मुगल बादशाहों ने आगे बढ़ाया। मुगल शासन के प्रशासन में भारत की अपनी भाषाओं का प्रयोग होता रहा। आज्ञाओं और शासकीय उपचारों में भारतीय लिपियों का प्रयोग भी होता रहा। परन्तु मुगलशासन काल में उच्च शासकीय स्तर पर प्रधानतः फारसी का वर्चस्व हो गया। इसका यह तात्पर्य नहीं कि तत्कालीन भाषाएं विशेषकर राजस्थानी, ब्रज,अवधी और दक्खनी आदि दब गई। भौगोलिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों ने इनके प्रयोग को अनिवार्यता प्रदान की। उपर्युक्त लोकभाषाओं को हिन्दी का पूर्व रूप माना जाता है। मुगलकालीन शासन के हिन्दी भाषा तथा देवनागरी लिपि में लिखे हुए अमल दस्तूर, आवर्जी, खतूत अहलकारान, बही ताकीत, अड्सट्टा, सींगा, मिसिलमुकदमा, नक्शावाकियात, पाना माहबारी, नक्शा वसूली, कागदबही, हौदाबही, रोजनाम प्रशस्ति आदि महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं जो प्रशासन सम्बन्धी विभिन्न कार्यों में प्रयुक्त किए जाते थे और एक दस्तावेज के बहुत से प्रकार होते थे। यद्यपि इनके शीर्षक फारसी भाषा में होते थे तथापि इनके विषय लोक प्रचलित हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में लिखे जाते थे। इन दस्तावेजों में हिन्दी की ब्रज, अवधि, राजस्थानी और खड़ी बोलियों का व्यवहार पाया जाता है। तत्सम और तद्भव शब्दों

के साथ फारसी शब्दों का भी प्रयोग किया जाता था। तत्कालीन देशी राजाओं के राजकाज में भी इस प्रकार के हिन्दी पत्रों का प्रयोग होता था। कुछ प्रलेखों में हिन्दी की अवधी, बुंदेली, बांगरु और राजस्थानी की विभिन्न स्थानीय उपबोलियों के प्रयोग भी किए गए हैं।

बादशाह अकबर का अमल दस्तूर राजभाषा हिन्दी का ज्वलन्त प्रमाण है। यह सम्राट अकबर के आदेश से हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि में लिखा गया था। यह दस्तावेज 14 पृष्ठों का है जो राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर में सुरक्षित है। अमल दस्तूर में अधिकारियों और कर्मचारियों को सम्राट ने कुछ आदेश दिए हैं ताकि वे प्रजा और प्रशासन में सुख एव शांति स्थापित कर सकें। यह फरमान बादशाह अकबर के उच्च स्तर के सलाहकारों से तैयार कराया गया था। यह राष्ट्रभाषा हिन्दी में बनी प्राचीन आचार संहिता है जिसके अनुसार अधिकारियों एवम् कर्मचारियों को शहर अथवा गाँव की उन्नति तथा समृद्धि के लिए प्रजा के सुख एंवम् समृद्धि तथा सेवा व परमार्थ के लिए प्रसन्नतापूर्वक अकबर के दरबार में राजकीय अधीनता स्वीकार करते हुए तथा अपने राज्य को अर्पण करते हुए शपथ ग्रहण करनी पड़ती थी। इस दस्तावेज में तत्कालीन अधिकारियों एवम् कर्मचारियों के दैनिक प्रशासन में उत्पन्न होनेवाली समस्याओं तथा उनका समाधान और नीतियों के कार्यान्वयन का सजीव वर्णन है। यह दस्तावेज अकबर प्रशासन के विधान, कार्यपालिका तथा न्यास पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डालता है। इस दस्तावेज की भाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी है। इसमें हिन्दी की राजस्थानी, ब्रज, खड़ी बोली और यत्र-तत्र अन्य बोलियों का भी प्रयोग किया गया है। अरबी और फारसी के विदेशी शब्द भी घुलमिल गए हैं। कहीं-कहीं संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों का प्रयोग भी पाया जाता है। यद्यपि व्याकरण और वर्तनी सम्बन्धी बहुत सी कमियाँ दिखाई पड़ती हैं किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय यह हिन्दी गद्य का मानक स्वरूप रहा होगा। जैसे - 'जैसा आदमी होई तिसकी तैसी सजा करै'

अकबर के समान जहांगीर में भी भारतीय भाषाओं के प्रतिं लगाव था। जहांगीर की शिक्षा-दीक्षा के लिए कई विद्वान नियत थे। सुप्रसिद्ध साहित्यकार अब्दुल रहीम खानखाना से जहांगीर ने फारसी-तुर्की के अलावा हिन्दी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया। उन्हें हिन्दी गीत बहुत पसंद आते थे। अपने आत्मचरित जहांगीरनामा में उन्होंने बताया है कि ग्वालियर और मथुरा जो श्रीकृष्ण का निवास-स्थान है और जिनको हिन्दू ईश्वर मानकर पूजा करते हैं, वहाँ के निवासियों की भाषा एक है और हिन्दुस्तान की अन्य भाषा से मधुर हैं। उस समय शाही खानदान के लोग 'हिन्दी' अर्थात् राजस्थानी या ब्रजमिश्रित हिन्दी का प्रयोग करते थे, परन्तु उन्हें फारसी की गहन शिक्षा दी जाती थी। उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद से प्रकाशित तारीख-ए-फरिश्ता चतुर्थ खण्ड में उल्लेख है कि 'थोड़े ही जमाने में आलमपनाह (जहांगीर) ऐसी खूबसूरत फारसी बोलने लगे कि जब तक हिन्दी जबान में हाजिरीन न फरमाते। हाजिरीन को यह मालूम होता था कि बादशाह ने तमाम उम्र सिवा फारसी के और किसी जबान में गुफतगू नहीं फरमाई।' डॉ. रामबाबू शर्मा लिखते हैं कि जब सम्राट सामूहिक मंच से अपने सामन्तों, सभासदों एवं जनता के प्रतिष्ठित व्यक्तियों को सम्बोधित करते थे तब प्रायः हिन्दी भाषा का ही व्यवहार करते थे। आजाद ने 'दरबार-ए-अकबरी' में टोडरमल की जीवनी का वर्णन करते हुए लिखा है कि 'पहले हिसाब-किताब का दफतर ठीक नहीं था। उसके सब काम उल्टे पुलटे और अनिश्चित से होते थे। जहां हिन्दू नौकर थे वहाँ का काम हिन्दी में चलता था और जहाँ विलासी नौकर थे वहाँ सब काम फारसी में होता था-लेकिन राजा टोडरमल ने यह निश्चय किया कि समस्त भारतवर्ष के दफतर केवल फारसी भाषा में हो जायें।'

हिन्दी की यही दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति रही है पहले भी आज भी। हमीं ने तब उसे सहभाषा की जगह ढकेला और आज भी हमीं उसे पीछे घिसटने को मजबूर किए हुए हैं। परन्तु जहाँगीर और शाहजहां के राज्यकाल में हिन्दी का विस्तृत उपयोग होता रहा। टोडरमल के यत्न से मालगुजारी के अरबी-फारसी के पारिभाषिक शब्द जो

भारत की भाषाओं में प्रचलित हो गए थे अपनी जड़ ज़मा गए। चूंकि बादशाह का प्रशासन अनेक राजपूत राजाओं से और इतने बड़े इलाके की आम जनता से सम्पर्क रखता था, इसलिए विकसित होती हुई हिन्दी या राजस्थानी, ब्रज आदि के दस्तावेजों के जरिए फारसी, अरबी की प्रशासन-शब्दावली गांवों तक पहुँचने लगी। यहीं से 'रेख़्ता' के माध्यम से उर्दू की नींव दृढ़ हो चली।

बादशाह अकबर के 'अमल दस्तूर' (शाही आज्ञाओं) के समान जहांगीर ने भी अपनी तरफ से बारह नियम और जारी किए थे। इन आज्ञाओं में लिखी हुई हिन्दी कुछ इस प्रकार की थी -

1. 'और षुसामदी होई तस स्ये प्यार न करिए किस वास्ते जु षासामदी से कुसी होई तिसका काम न पूरा होई।
2. और गुस्सा के बषत अकील की डोरी हाथ स्यो न दोही।'
3. पातसाही अर सिदारी का तात्पर जई हैं जो षलक की रखाली करै।
4. सब धर्म के अतीत हैं तिन सब ही क्यों प्यार रखैं।'

जहांगीर ने अपने जमाने में वाकिया नवीस नामक गुप्तचर सारे राज्य में फैला रखे थे। वे अपनी-अपनी रिपोर्ट तरह-तरह की भाषाओं में भेजते थे। उनमें से अधिकांश तत्कालीन हिन्दी में होती थीं। चूंकि उस समय प्रशासन में द्विभाषिक स्थिति थी इसलिए हो सकता है कि कुछ शाही आज्ञाएं पहले फारसी में तैयार होती हों और बाद में हिन्दू इलाकों में उनका हिन्दी तर्जुमा भेजा जाता हो, परंतु जो कागजात बीकानेर और जयपुर के संग्राहलयों में सुरक्षित हैं, वे शासन में हिन्दी के प्रयोग के प्रमाण हैं। जो पंचनामे हिन्दी राजाओं द्वारा या हिन्दुओं के साक्ष्य में लिखाए जाते थे उनमें संस्कृतनिष्ठता होती थी जैसे - 'संवत् 1669 समये कुंअर सूदी तरसी बार शुभ दिने लिखीत पत्र आनन्द राम तथा कन्हई के अंश विभाग-मेरो प्रणाम दुहुन जने विदित तफसील अंश टोडरमल के...' तात्पर्य यह है कि उनमें शासन के फारसी के

शब्दों के साथ इबारत में संस्कृतनिष्ठ परम्परागत शैली की भी प्रधानता होती थी। रजवाड़ों में तो परम्परागत शैली में ही पत्र लिखे जाते थे। जैसे - 'सिद्ध श्री 108 स्वस्ति श्री संवत् वर्षे माघ सुदि 8 गुरी अधैव-'। साहित्य और संस्कृत के उत्थान के लिए जहांगीर के शासनकाल में सम्राट अकबर के समय के समान ही अनुकूल वातावरण रहा। मुसलमानों ने हिन्दी में साहित्य रचना की और हिन्दुओं ने फारसी में।

राजस्थान के बीकानेर स्थित राज्य अभिलेखागार में मुगल बादशाह औरंगजेब और उसके उत्तराधिकारी बहादुरशाह जफर के तत्कालीन जयपुर नरेश महाराज जयसिंह को भेजे गए हिन्दी भाषी देवनागरी लिपि में लिखे गए सैंकड़ों पत्र सुरक्षित हैं। कहीं-कहीं इन्हें अरजदास्त के नाम से भी कहा गया है। ये अरजदास्त भारतीय परम्परा के अनुसार मांगलिक शब्द 'श्रीरामजी' से प्रारम्भ की जाती थी। इस प्रकार के मुलगकालीन सैंकड़ों दस्तावेज राज्य अभिलेखागार बीकानेर में सुरक्षित इनके अध्ययन से हिन्दी पत्रों की लेखन पद्धति, पारिभाषिक शब्दावली, भाषात्मक अध्ययन और राजभाषा की परंपरा का बोध होता है। उस काल में उदयपुर, जोधपुर, जयपुर, कोटा, बूंदी आदि सभी रजवाड़ों के राजकाज में हिन्दी का प्रयोग होता था। 1745 ई. में बीकानेर के राजा गजसिंह ने जयपुर के महाराजा माधोसिंह को हिन्दी में पत्र लिखा। जयपुर के दीवान पं. शिवदीन का पत्र हिन्दी में लिखित पाया गया है। इस प्रकार के सैंकड़ों पत्रों का भण्डार राजस्थान सरकार के बीकानेर स्थित प्राचीन लेख-संग्रह में हैं।

मराठा शासन में हिन्दी का प्रयोग राजभाषा के रूप में व्यापक रूप में मिलता है। मराठों के राजकाज से संबद्ध सैंकड़ों पत्र पूणे तथा बीकानेर के अभिलेखों में सुरक्षित हैं। पत्र व्यवहार के लिए हिन्दी अथवा 'हिन्दवी' भाषा को माध्यम बनाया गया था। डॉ. केलकर के अनुसार 'उत्तरी भारत के नरेश, कर्मचारी आदि तो पेशवा, मराठा सरदारों, मराठा शासन के अधिकारियों आदि को हिन्दी में पत्र लिखते ही थे परन्तु उधर पेशवा, मराठा सरदारों और सेनानायकों को मराठा राज्य के अधिकारियों आदि

की ओर से भी जो कागज पत्र इन हिन्दी-भाषी राजपूत नरेशों, उनके राजघरानों, कर्मचारियों आदि को लिखे जाते थे, वे भी हिन्दी में ही होते थे। यही नहीं, उन प्रदेशों के राजकीय कार्य सम्बन्धी अनेकानेक प्रमाणपत्र, निर्देश, राजनीतिक या आर्थिक समझौते, संधिपत्र आदि भी अनिवार्य रूपेण हिन्दी में ही लिखे जाते रहे।' 18वीं सदी के प्रारम्भ में जब मुगल साम्राज्य का पतन हुआ, मराठा शासकों ने अपना प्रभुत्व स्थापित करना शुरू कर दिया था। उन्होंने बुंदेलखंड के शासन में हिस्सा प्राप्त किया और पंजाब व राजस्थान में आधिपत्य स्थापित करने के प्रयास प्रारम्भ कर दिया। उत्तर भारत में मराठों ने हरिद्वार, प्रयाग, काशी, गया आदि तीर्थो पर अपना प्रभाव और शासन स्थापित कर लिया। तब उनका संपर्क अधिकारियों, व्यापारियों और किसानों के साथ हुआ। ऐसी स्थिति में मराठा राजाओं, पेशवाओं और सरदारों के प्रशासन की व्यवस्था के साथ-साथ हिन्दी को अपने राजकाज की भाषा स्वीकार करना पड़ा। मराठा शासक अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी का प्रयोग करते थे। मराठा शासकों, सरदारों और पेशवाओं की ओर से राजपूत नरेशों और उनके कर्मचारियों को जो भी पत्र लिखे जाते थे, वे हिन्दी भाषा में होते थे। इसी प्रकार राजपूत नरेशों, मुगल बादशाहों एवम् राजकीय कर्मचारियों की ओर से जो भी पत्र मराठा शासकों को लिखे जाते थे, उनकी भाषा हिन्दी ही होती थी। मराठों के राजकाज में सनद का आज्ञापत्र, कवज, यादाश्ति, अर्जदास्ती, जमा वासिल, कबुलियात, रसीद आदि में हिन्दी का प्रयोग होता था। इन पत्रों में हिन्दी के सैकड़ों पारिभाषिक शब्द पाए जाते हैं जो हमारे जन-जीवन में घुलमिल गए हैं और जिनका प्रयोग करने से हमारी वर्तमान राजभाषा हिन्दी को बल प्राप्त होत। है। इन शब्दों में अदालत, दीवानी, नालिश, हुक्म, मालगुजारी, तबदीली, सलाह, बंदोबस्त, समाचार, राजभूमि, सेवा, सरहद, आबकारी, तहसीलदार, जनरल आदि विशेषरूप से उल्लेखनीय है। इन पत्रों की भाषा खड़ी बोली है। इनमें ब्रज, फारसी, मराठी, अरबी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। यहाँ-वहाँ संस्कृत के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग दिखाई पड़ता है। यद्यपि भाषा

में व्याकरण शिथिलता और वर्तनी सम्बन्धी अनियमितताएं पायी जाती हैं। मराठा काल की कई मोहरें प्राप्त हुई हैं जो हिन्दी में हैं। मराठों के राजकाज से संबद्ध भूमिकर, सेना, युद्ध, अर्थविभाग, राजनीति, धर्मशास्त्र, राजनीति सम्बन्ध,सामाजिक एवं सांस्कृतिक अभिव्यक्ति, स्वतंत्रता, दानपत्र, ज्योतिष, मराठी से हिन्दी में अनुवाद संबंधी सैंकड़ों वाक्य, उपवाक्य और पारिभाषिक शब्द भी प्राप्त होते हैं।

'पेशवे दफ्तर' में मराठी पत्रों के साथ पर्याप्त हिन्दी के पत्र भी हैं। इन सरकारी पत्रों में 78 प्रकार के विभिन्न पत्र प्राप्त हुए हैं। इन पत्रों में प्रशासन सम्बन्धी पर्याप्त शब्दावली मिलती है। मराठा प्रशासन में ताम्रपत्र लिखने, मराठी से हिन्दी में अनुवाद, राजनीतिक समझौते, सेना-प्रशासन में हिन्दी का पर्याप्त प्रयोग मिलता है। डॉ. केलकर का अध्ययन 1701 से 1800 ई. तक की राजभाषा के स्वरूप पर आधारित है जिनमें सहस्त्रों दानपत्रों, पत्रों, पट्टों, परवानों, बहियों आदि में सुरक्षित हिन्दी भाषा पर प्रकाश पड़ता है। मराठी अभिलेखों में प्राप्त कुछ प्राचीन वाक्य हैं : 'संकुजी भोंसले कहे सो प्रमाण करना', 'अस यहाँ षरीक की किस्तबन्दी करी है, या 'तहसील करके षजानों नरसिंहगर पहुँचावे।' बड़ौदा-नरेश सयाजी गायकवाड़ की आज्ञा से 'सयाजी शासन शब्द कल्पतरु' शीर्षक से प्रशासन शब्दकोश तैयार किया गया जिसमें गुजराती, बंगला, मराठी, फारसी के अतिरिक्त हिन्दी रूप भी दिए गए हैं। इस कोश से पता चलता है कि सत्रहवीं शताब्दी के प्रारंभ में वहाँ मध्यस्थ पंच, नित्यावास, बंदीपाला, काराध्यक्ष, कर्मसचिव, अनंतिम आज्ञा, निक्षेप, समिति, व्यवस्थापक, टीपण, व्यावस्थापत्र, उत्तराधिकारी, वादी विवादी जैसे सैंकड़ों शब्द प्रचलित थे। सत्रहवीं शती में ही 'राजव्यवहार कोश', 'शब्दरत्न समन्वय', 'शब्दार्थ संग्रह' जैसे कोश तैयार कर लिए गए थे।

राजकाज सम्बन्धी इन मराठा हिन्दी दस्तावेजों में पारिभाषिक शब्दावली ही नहीं अपितु ऐसे असंख्य मुहावरे भी पाए जाते हैं जो प्रशासन सम्बन्धी विभिन्न विभागों से सम्बद्ध हैं। जैसे मोर्चा उठाना, अमल बहाल करना, गादी पर दावत करना, तहस

नहस करना, अब ने करना। संबंध सुधारना, चरण देखना, चौकसी करना (तलाशी करना), फौज पर चाल करनां (आक्रमण करना), मड़ीसर करना (अधिकार कर लेना), चोड़े चलना (घुड़संवारों के दस्तों से आक्रमण करना), गर्द न करना (क्षमा न करना) आदि।

हिन्दी की सरलता, देश के अधिकांश जनसमुदाय में बोलचाल का माध्यम होना, राजनीतिक व्यवहार क्षमता, शब्दावली की उपलब्धता ने ही विदेशियों को भी इस भाषा की ओर आकर्षित किया। जिस प्रकार राजपूत, मुगल और मराठों के राजकाज की भाषां हिन्दी थी उसी प्रकार अंग्रेजों ने अपना राजकाज हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रारम्भ किया। उन्होंने इस आवश्यकता को महसूस किया कि देश में आपसी विचार विमर्श के लिए कोई सामान्य भाषा हो और यह भाषा हिन्दी-हिन्दुस्तानी हो सकती है। जब ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारियों ने भारत की राजनीति और प्रशासन में हस्तक्षेप करना शुरु किया तो कम्पनी सरकार के समक्ष एक महत्वपूर्ण प्रश्न सरकार के कामकाज की भाषा का था। उन्होंने इस बात को समझा कि एक ऐसे देश में जहाँ पहले से ही एक समृद्ध भाषा के रूप में हिन्दी का व्यवहार हो रहा हो तथा जिस भाषा के माध्यम से वहाँ की जनता सदियों से अपनी सांस्कृतिक, साहित्यिक, धार्मिक, राजनीतिक और ऐतिहासिक अभिव्यक्ति करती आ रही हो वहां अकस्मात् ही एक विदेशी भाषा का प्रशासन में प्रयोग कर देना स्वयं के लिए एक नई परिस्थिति पैदा करना तथा अपने कार्य में अवरोध पैदा करना था। इसलिए कम्पनी सरकार ने शुरू में अपनी राजभाषा सम्बन्धी नीति यथावत् रखी और अपना राजकाज हिन्दी भाषा के माध्यम से संचालित किया। इसके द्वारा वे तत्कालीन देशी राजाओं, किसानों, व्यापारियों आदि के मन में अपने प्रति विश्वास भी उत्पन्न करना चाहते थे। यद्यपि अंग्रेजों के प्रशासन में अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी होने लगा था फिर भी वे अन्दर ही अन्दर हिन्दी भाषा एवम् अन्य भारतीय भाषाओं के महत्व को भी स्वीकारते रहे थे। उन्होंने 'होम' विभाग के अन्तर्गत 'तर्जुमा महकमा' की स्थापना भी की जो

जनसाधारण से सम्बन्धित सूचना व सरकारी आदेशों का हिन्दी भाषा में अनुवाद करता था। इस प्रकार के अनुवाद की व्यवस्था सुपरिन्टेंडेंट, पोलिटिकल एजेंटों, गवर्नर जनरल तथा रेसीडेंटों के कार्यालयों में थी।

अंग्रेज शासकों की मान्यता थी भारत में प्रशासन को अधिक लोकप्रिय सफल और सरल बनाने के लिए यहां की लोकप्रिय भाषा हिन्दी के व्यवहार की आवश्यकता है। जब तक प्रशासन वर्ग शासित जनता के धर्म, संस्कृति, समाज, व्यवस्था, इतिहास आदि की भाषा से परिचित नहीं होता वह सम्बद्ध जनता पर अपना प्रशासन स्थापित करने में सफल नहीं हो सकता। कम्पनी तथा ब्रिटिश सरकार ने इन पक्षों पर विचार किया और इन्हीं लक्ष्यों को सामने रखकर उन्होंने सिविल अधिकारियों के लिए हिन्दी, बंगला आदि भारतीय भाषाओं के प्रशिक्षण की व्यवस्था इंगलैंड और भारत में की। भारत में उक्त प्रशिक्षण की व्यवस्था फोर्ट विलियम कॉलेज में की गई। हिन्दी के स्वरूप को विकसित करने में फ़ोर्ट विलियम कॉलेज़ की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सन् 1800 में नियुक्त जॉन गिलक्रिस्ट का योगदान ऐतिहासिक इस बात के लिए रहा कि उन्होंने एक सर्वमान्य भाषा के रूप में विस्तृत भूभाग में बोली जाने वाली भाषा को खड़ी बोली के नाम से अभिहित किया। चूंकि कम्पनी प्रशासन सरकार की कामकाज की भाषा के प्रति सचेत था, उसने कॉलेज में नियुक्त लल्लूजीलाल तथा सदल मिश्र से खड़ी बोली हिन्दी में पुस्तकें तैयार कराई। गिलक्रिस्ट के प्रयासों के फलस्वरूप ठीक एक वर्ष पश्चात् यह घोषणा कर दी गई कि 'सन् 1801 के प्रारम्भ से ऐसा कोई भी सिविल सर्वेंट किसी विश्वास तथा उत्तरदायित्व के पद पर नियुक्त नहीं किया जाएगा जब तक यह निश्चय न कर लिया जाए कि उसे गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए कानूनों, नियमों तथा उन भाषाओं का ज्ञान है जो उनके पद से सम्बन्धित कार्यकलाप के लिए आवश्यक है।' श्री एच. एच. विल्सन के अनुसार 'गिलक्रिस्ट ने बड़े श्रम और सूझ से एक स्टैंडर्ड स्थापित किया जो न केवल उस भाषा को सीखने वरन् उसकी रक्षार्थ आवश्यक था।' गिलक्रिस्ट ने 'हिन्दी को अस्थिर तथा लचकीली बोली की स्थिति

से उठाकर नियमित स्थिरता और एकरूपता दी। कॉलेज की स्थापना के वर्ष में ही कंपनी के 2 सितंबर 1800 ई. के डिस्पैच में हिन्दी-हिन्दुस्तानी के संदर्भ में गिलक्रिस्ट की सेवाओं की प्रशंसा की गई कि किस तरह से उन्होंने जूनियर सर्वेन्ट्स के लिए हिन्दुस्तानी के ठीक-ठीक और विस्तृत ज्ञान की आधारशिला रखी। नौकरशाही द्वारा उनके कार्य में बाधा पहुँचाने से क्षुब्ध होकर गिलक्रिस्ट ने 1804 में त्यागपत्र दे दिया और इंगलैंड जाकर हिन्दुस्तानी की अंत तक सेवा करते रहे। कॉलेज के अन्य व्यक्तियों में विलियम प्राइस का योगदान लल्लूजीलाल और सदल मिश्र से कम महत्वपूर्ण नहीं रहा। उनकी कृतियों में 'हिन्दोस्तानी की व्याकरण', 'हिन्दोस्तानी की नई व्याकरण' तथा 'हिन्दी व हिन्दुस्तानी सिलेक्शन्स' उल्लेखनीय हैं।

ऐसी बात नहीं है कि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के फलस्वरूप अनायास ही हिन्दी या हिन्दुस्तानी के प्रति राग उत्पन्न हो गया हो। इससे पहले भी हिन्दी का पर्याप्त महत्व अंग्रेजों ने समझना शुरू कर दिया था और एक अनुकूल वातावरण तैयार हो चुका था। एडवर्ड टेरी ने सन् 1655 में कहा था कि 'हिन्दुस्तान देश की बोलचाल की भाषा अरबी-फारसी जबानों से बहुत मिलती-जुलती है पर बोलने में ज्यादा सुखकर और आसान है। इसमें काफी रवानी है और थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कहा जा सकता है। लोग हमारी ही तरह बाएं से दाएं की ओर लिखते हैं। संस्कृत के विद्वान हेनरी टॉमस कोलब्रुक जब 1782 में बंगाल सर्विस में आए थे उन्होंने कहा था, 'जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रांत के लोग करते हैं, जो पढ़े-लिखे तथा अनपढ़ दोनों की साधारण बोलचाल की भाषा है और जिसको प्रत्येक गांव के थोड़े-बहुत लोग अवश्य समझ लेते हैं, उसी का यथार्थ नाम हिन्दी है।' मुद्रा तथा चपरास में हिन्दी (नागरी) का अनिवार्य प्रयोग सन् 1793 से ही प्रारम्भ हो गया था। उसी समय मुद्रण के लिए टाइप के जन्मदाता कैरी (1796) ने कहा कि 'सम्भवतः संस्कृत की शाखा-प्रशाखा से विकसित हिन्दी विस्तृत भूभाग में फैली हुई है। राजमहल से दिल्ली तक आम भाषा है और इसके भी आगे शायद पूरे हिन्दोस्तान

में इसके माध्यम से समझा सकता हूँ विलियम बटरवर्थ बेली (1802) के अनुसार,

"It is moreover the general medium by which persons communicate their wants and ideas to each other.."

इस पर टिप्पणी करते हुए डॉ. राम विलास शर्मा ने 'हिन्दी भाषा की विकास परम्परा' में कहा है, 'आगरा जैसे व्यापार केन्द्रों में किसी समय विदेशी व्यापारी, राजदूत आदि न केवल यहां की जनता से विचारों का आदान-प्रदान करने के लिए वरन् आपस में अन्तर्राष्ट्रीय संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी या हिन्दुस्तानी का व्यवहार करते थे...'

उस समय व्यापारिक, सैनिक और राजनैतिक सभी क्षेत्रों के सारे कामकाज की भाषा यही थी -

"How universally are commercial and military concern and even political correspondence of the highest consequence, connected with it that carried on it,.... that language is the most proper and necessary for conducting the affairs of civil government and commences of military as well as judicial cases." विनियमों के हिन्दुस्तानी अनुवाद की व्यवस्था सन् 1803 में कर दी गई थी, "every regulation with the original notes shall be translated in Hindustani" डॉ. सैण्डफोर्ड आर्नो ने 'हिन्दुस्तानी व्याकरण', 'आन द ओरिजिन ऑफ स्ट्रक्चर ऑफ द हिन्दुस्तानी टंग एण्ड जनरल लैंगवेज' 1828 और 'एन्यू सेल्फ इन्ट्रक्टिंग ग्रामर ऑफ द हिन्दुसतान टँग' (1831) लिखीं। डंकन फोर्ब्स ने एक 'हिन्दी मैनुअल' (1845) दो भागों में और एक कोश हिन्दी-अंग्रेजी तथा अंग्रेजी-हिन्दी दो खण्डों में (1848) प्रकाशित किया। दिल्ली के रेजिडेंट सी.टी. मेटकॉफ़ ने अपने दि. 29.8.1806 के पत्र में लिखा, 'भारत के जिस भाग में मुझे काम करना पड़ा है, मुझे हर जगह ऐसे लोग मिले हैं जो हिन्दुस्तानी बोल सकते हैं।' लगभग ऐसे ही विचार मद्रास के लेफ्टीनेंट टामस रोबल ने रखे थे:

'हिन्दुस्तानी सामान्य जनता की बोलचाल की भाषा तथा भारत की महान लोकप्रिय भाषा है।' उन्होंने सन् 1811 में अपनी हिन्दुस्तानी-अंग्रेजी नेवल डिक्शनरी (लश्करी डिक्शनरी) प्रकाशित की। सन् 1824 में रोबक ने मुहावरों तथा कहावतों का संग्रह कलकत्ता से प्रकाशित किया। एच.एच. विलसन ने प्रशासनिक शब्दावली को 'ग्लोसरी ऑफ जुडीशियल एण्ड रेवेन्यू टर्म्स' (1855) शीर्षक से प्रस्तुत किया।

वस्तुतः पहले चार दशकों में सिविल सर्विस के अधिकारियों में जो हिन्दी-हिन्दुस्तानी की लहर दौड़ रही थी, उसको कठोरता से रोकने के लिए ही मैकाले ने सन् 1835 में सुप्रसिद्ध 'मिनट' प्रस्तुत किया। किन्तु मैकाले और उसके पीछे पूरी ब्रिटिश सरकार के प्रयत्नों के बावजूद सन् 1951 तक भारत में अंग्रेजी का प्रतिशत मात्र एक रहा। दूसरी ओर अंग्रेजों के विरुद्ध अंग्रेज ही लड़ते रहे। उनमें सबसे पहले नाम आता है फ्रेडरिक पिन्काट का। मात्र 32 वर्ष की अवस्था में उनकी ब्रिटिश सरकार से लड़ाई 1868 ई. से शुरु हो गई थी। वे इस नियम को बनवाने में सफल रहे कि भारत जाने वाले अंग्रेजों को हिन्दी परीक्षा पास करना अनिवार्य हो। सन्1876 में केलाग ने 'हिन्दी व्याकरण' प्रकाशित किया और उसमें घोषित किया कि 'भारतीय आर्य भाषाओं में महत्व की दृष्टि से हिन्दीका स्थान प्रथम है। साथ ही उन्होंने स्तरीय हिन्दी के स्थापित होने की भविष्यवाणी इन शब्दों में की '... भविष्य में उत्तर भारत की जो भाषा राजकाज या साहित्य की भाषा बनेगी, वह ऐसी भाषा होगी जो उर्दू की भांति अरबी-फारसी से कम प्रभावित होगी, साथ ही उसमें वर्तमान हिन्दी की अपेक्षा संस्कृत तथा प्राकृत के शब्द भी कम रहेंगे।'

इस संघर्ष के चलते अंग्रेजी सरकार के सामने इसके अलावा कोई रास्ता न था कि भारत में प्रशासन में आने वाले सिविल सर्विस के उच्च अधिकारियों के लिए हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषा का ज्ञान अनिवार्य कर दिया जाए। इसके साथ ही यह व्यवस्था भी की गई कि मद्रास जाने वाले अधिकारियों के लिए हिन्दुस्तानी के लिए विशेष पुरस्कार दिया जाए। इस प्रकार 1881 का वर्ष प्रशासन में हिन्दी तथा भारतीय

भाषा के लिए याद रखा जाएगा। यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि लगभग एक शताब्दी पूर्व इन सिविल सर्विस के अधिकारियों को क्या-क्या पढ़ाया जाता था। इसका उत्तर हमें फ्रेडरिक पिनकाट के 1 जनवरी 1884 को भारतेन्दु हरिश्चन्द को लिखे पत्र से मिलता है :- 'वह सिविल सर्वेंट्स केवल चार पोथी पढ़ते हैं। डॉ. हाल साहब का हिन्दी रीडर, किल्लोग साहब का हिन्दी व्याकरण, मेरा हिन्दी मेनुअल और मेरा 'शकुन्तला।' हिन्दी मेनुअल एक प्रकार से व्याकरण तथा पाठ्य पुस्तक थी जिसका पूरा नाम था 'द हिन्दी मेनुअल,कम्प्राइज़िंग ए ग्रामर ऑफ हिन्दी लैंग्वेज विद लिटररी एण्ड प्रोविंसिअल कम्पलीट सिन्टैक्स।' इसकी लोकप्रियता इस बात से सिद्ध होती है कि पिन्काट की इस पुस्तक के तीन संस्करण दस वर्ष से भी कम समय में बिक गए थे।

हिन्दी क्षेत्र बिहार में हिन्दी का प्रारंभ सन् 1875 में हो गया था पर 1880 में कड़ा आदेश निकाला गया कि जनवरी 1881 से प्रांत की अदालती भाषा एकमात्र नागरी लिपि में लिखित हिन्दी होगी। मध्य प्रदेश में यही आदेश सन् 1881 में और यू.पी. में सन् 1900 में निकाला गया जबकि मार्च 1898 में मालवीयजी के नेतृत्व में शिष्टमंडल गवर्नर से मिला। सन् 1882 में हंटर महोदय की अध्यक्षता में शिक्षा की समस्याओं पर विचार करने हेतु आयोग गठित कियां गया जिसकी रिपोर्ट 1893 में प्रकाशित हुई। आदेश के समक्ष काफी लोगों ने साक्ष्य दिए जिनमें हिन्दी-जनभाषाओं का महत्व बताया गया। किन्तु इससे अपेक्षानुकूल परिणाम नहीं निकला। 1901 की जनगणना की रिपोर्ट के प्रथम खण्ड में हिन्दी के महत्व को प्रतिपादित करते हुए क्रस्ट महोदय ने लिखा कि हिन्दी के पास ऐसा शब्दकोश और अभिव्यक्ति का ऐसा सामर्थ्य है जो अंग्रेजी से किसी भी प्रकार कम नहीं। इस प्रकार हम देखतें हैं कि अंग्रेजी शासन के समक्ष महत्वपूर्ण प्रश्न सरकार की कामकाज की भाषा से सम्बन्धित सदैव रहा। यहाँ तक कि मैकाले के 'मिनिट' के बाद भी थामसन ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट आदेश दिया कि इंग्लिश अफसरों के सिवाय जनता के साथ सभी कामकाज वर्नाक्यूलर

भाषा में किया जाए।'

जिस प्रकार के सरकारी हिन्दी पत्रों का प्रयोग मुगल और मराठों के प्रशासन में होता था और वे पत्र यथावत् अंग्रेजी प्रशासन में भी व्यवहार में आते रहे, तथापि उन्होंने इस प्रकार के कुछ पत्रों का प्रयोग हिन्दी भाषा के माध्यम से प्रारम्भ किया जो परम्परा और प्रकृति की दृष्टि से अंग्रेजीपूरक थे। धीरे-धीरे ऐसे पत्रों का भारतीयकरण होता गया और वे भारतीय प्रशासन के अंग बन गए। इस प्रकार उनके राजकाज में प्रयुक्त होने वाले पत्रों में अर्जी, जमानत पत्र, शर्तनामा, अदालती कार्यवाही, कबूलनामा, सनद, दस्तक, अहदनामा, मुख्तारनामा, राजीनामा, हुक्मनामा, फाइलनोट, दरख्वास्त, याददास्त, फेहरिस्त, कैफियत, खसरा एवम् फरद आदि पत्र उल्लेखनीय हैं। अर्द्धशासकीय पत्र (डेमी ऑफिशियल) ब्रिटिश शासन की देन है।

कम्पनी प्रशासन की कचहरी की कार्यवाही में हिन्दी प्रयोग का नमूना -

मोहर

नाम तुम्हारा केआ है	आत्माराम
कहां रहता है बा केआ काम करता है	बीरभूम मां रहते हैं वो कलकत्तर 321 जीले के हैं।
जिले बीहार मो कीश वाश्ते आम हव	तीन्ह के हम चपराशी है सरकार के वाश्ते आए हैं।
कवन सरकार कोशिं वाशते आए थे	तलब चीठी बनाम राजाराम के जीला वीरभूम के कलक्तर के दशखत शे लाए थे।

अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर भी अंग्रेज शासक सम्बद्ध राष्ट्रों के साथ हिन्दी में पत्र व्यवहार करते थे। नेपाल के साथ उनका पत्रव्यवहार हिन्दी भाषा में ही था। कम्पनी सरकार द्वारा 20 मई 1814 को एक घोषणापत्र नेपाल के राजा के नाम जारी किया

गया था जिसमें न्यायिक जांच के आधार पर विवादास्पद क्षेत्र पर ब्रिटिश सरकार के अधिकार की सूचना दी गई थी। यह पत्र हुक्म इश्तहार के नाम से सम्बोधित किया गया है और इसमें खड़ी बोली का प्रयोग है। भाषा उर्दू तथा फा़रसी की ओर अधिक झुकी हुई है। दस्त, अन्दाजी, आइन, इन्साफ, अजमतदारी, तहकीकात, दलील आदि पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया गया है। सीमा विवाद सम्बन्धी एक अन्य पत्र के अंश की भाषा का प्रयोग इस प्रकार से हुआ है :

'इस वास्ते माफिक हुकुम जूनों आव गोरनर जनरल बहादुर दाम एकबाल हुके तमाम तएह मीलों हुआ सरहद सरकार चंपारन के जो कब्जे राजे, नेपाल के था सो बीच कब्जे सरकार कम्पनी अंगरेज बहादुर के दरवाजा।'

इसी प्रकार ऐसे हजारों दस्तावेज राष्ट्रीय अभिलेखाकार में सुरक्षित हैं, जिनका संबंध देशी राज्यों की सीमाओं के परस्पर झगड़े और उनके समझौते, गवर्नर जनरल के राजाओं को आदेश आदि से है। इन पत्रों की लेखन पद्धति में भारतीय परम्पराओं के पालन के साथ-साथ तत्कालीन अंग्रेजी परम्पराओं के प्रभाव की झलक भी दिखाई पड़ती है।

ब्रिटिश शासन में जहाँ एक ओर भारत की राजनीति तथा प्रशासनिक परिस्थितियों में परिवर्तन तथा सघर्ष चल रहें थे, वहाँ दूसरी ओर भाषा क्षेत्र में आन्तरिक क्रान्ति हो रही थी। अकबर से लेकर औरंगजेब के समय तक ब्रजभाषा की जो मान्यता राजदरबार और राजकाज के कार्यो में रही वह बाद में धीरे-2 घटती गई। दिल्ली और उसके आसपास बोली जाने वाली खड़ी बोली प्रशासन और साहित्य के अधिक निकट आने लगी। तत्कालीन प्रशासन में प्रचलित फारसी-अरबी के शब्द खड़ी बोली में अधिक उदारता पूर्वक आत्मसात् होने लगे। इस अवधि की राजभाषा में सद्‌भावना शब्दों की बहुलता, यहां-वहां संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग, राजस्थानी, ब्रज आदि बोलियों का प्रभाव, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग और अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग पाया जाता है। उदाहरणार्थ-''लक्षमीचन्द का घोड़ा कुछ

षोफ सरकार का नाहीं रफता है इरादा फिसाद का सरकार सोरपते है उनको कुछ षोफ नहीं है।'' ''इसमें घड़ा दंगा होने का वष्त है।'' देशी रियासतों में स्थित गर्वनर जनरल के एजेंटों के कार्यालयों में हिन्दी अनुवाद की पूरी ब्यवस्था थी। यह कार्यालय देशी नरेशों द्वारा गवर्नर जनरल को हिन्दी में लिखे हुए खरीतों के साथ उनके अनुवाद की अंग्रेजी प्रति संग्लन कर भेजता था तथा इसी प्रकार गवर्नर जनरल द्वारा राजाओं की अंग्रेजी में भेजे हुए पत्रों का हिन्दी अनुवाद भी भेजता था। भारत सरकार के होम डिपार्टमेंट में भी अंग्रेजी से हिन्दी में 'तर्जुमा' अर्थात अनुवाद की ब्यवस्था थी। ये पत्र प्राय:सर्वसाधारण द्वारा को सूचनार्थ एवम् घोषणा से सम्बद्ध होते थे। उदाहरणार्थ:(राष्ट्रीय अभिलेखागार से)

तजुर्मा नम्बर 55

3773/3764

सीगें होम डिपार्टमेंट

मुकाम शिमला तरीख 29 अगस्त सन् 1857 हाल के इस्तिहान से बात बाखूबी जाहर हुई है सख्त.बिमारी बाकी भीड़ों में आदमियों में पैदा होती है जो हिन्दुस्तान के अन्दर अलग-अलग मुकामों से जत्रा (यात्रा) के वास्ते वक्त वक्त पर जमा होते थे।

नाना साहब की गिरफ्तारी के सम्बन्ध में अंग्रेज सरकार द्वारा 28 फरवरी 1958 के एक इश्तिहार की कुछ पंक्तियाँ : 'कोई न्हाना डौड पंथ को जीता गिरफ्तार करके हाजर करेगा या अपनी तदवीर पर पैरवी से गिरफ्तार कराएगा एक लाख रूपीइया इनाम पागा...' इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अंग्रेजों द्वारा भी राजकाज में हिन्दी को पर्याप्त स्थान दिया जाता था। यद्यपि मैकाले की योजनानुसार शिक्षा को अंग्रेजी का माध्यम दिए जाने के साथ शिक्षा को नौकरियों से जोड़ दिए जाने के कारण सरकारी काम-काज में अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ने लगा था, परन्तु हिन्दी के प्रयोग को समाप्त नहीं किया जा सका तथा रियासतों का काम-काज तथा अंग्रेजों से पत्राचार आदि अबाध गति से हिन्दी के माध्यम से चलता रहा।